Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

7. कोरकू जनजाति में लोककथाएँ: एक मानवशास्त्रीय समीक्षा

विवेक कुमार
शोधार्थी, मानवविज्ञान एवं जनजाति अध्ययन विभाग, झारखंड केंद्रीय विश्वविद्यालय, राँची
vivekanthro18@gmail.com
महेंद्र कुमार जायसवाल
शोधार्थी, मानवविज्ञान विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)
mahendrajaiswal712@gmail.com

शोध सारांश

भारतीय समाज के जनमानस में प्रचलित लोक साहित्य के विभिन्न रूप कभी भी उपेक्षित नहीं रहे जिनमें लोक गीत, लोक कथाएँ, लोक गाथा, लोक नृत्य, लोक कला, लोक संगीत, लोक वाद्य एवं लोकोक्तियाँ, मुहावरे, पहेलियाँ इत्यादि प्रमुख है। जिनकी प्राचीनता, महत्त्व एवं उपयोगिता सभी जगह हमेशा से रही है। ये सभी व्यक्ति रचित न होकर लोक रचित होती है, जो मौखिक रूप से निरंतर आगे बढ़ती रहती है। लोगों के द्वारा सृजित यह मौखिक वाणी मानव संस्कृति का दर्पण है। एक सांस्कृतिक परंपरा केवल कला परंपरा नहीं होती है बल्कि वह बोध, संज्ञान, सौंदर्य, रचना आदि मनुष्य और सृष्टि के संबंध की सांस्कृतिक प्रतिमान है। भारतीय पारंपरिक जीवन में वाचिक का अर्थ, केवल जनपदीय लोक, मौखिक साहित्य तक सीमित नहीं है, वास्तव में वह जीवन की ज्ञान परंपरा तक फैला है। इन लोक विद्याओं की उत्पत्ति कल्पना से होती है, जो मानव की आदि सहचर है। कल्पना की सहायता से आदिकाल से ही मानव बहुत कुछ सोचता और कहता आया है। लोककथाएँ इसी का सर्वाधिक लोकप्रिय रूप हैं। लोककथा में कल्पना का तत्व अधिक होता है एवं वास्तविकता बहुत कम। इसकी विषय वस्तु की कोई सीमा नहीं है। लोककथा हमारे आर्थिक, सामाजिक तथा धार्मिक जीवन से संबंधित हो सकती है। ऐसी भी लोककथाएँ हो सकती हैं जिनका इनसे कोई संबंध न भी हो।

मुख्य शब्द- महाराष्ट्र, मेलघाट क्षेत्र, कोरकू जनजाति, लोक साहित्य, लोककथा, साहित्यिक पुनरावलोकन

प्रस्तावना

मनुष्य एक कल्पनाशील प्राणी है। इसी की सहायता से मानव भिन्न-भिन्न विकास के स्तरों को पार करते हुए वर्तमान युग तक आया है। मानव ने इस विकास के क्रम में अपनी सारी अनुभवों को अपनी भावी पीढ़ी को बताता हुआ आया है। लोककथाएँ इसी का एक प्रचलित रूप है। अर्थात, मनुष्य ने जो भी अपनी कल्पना में या स्वप्न में देखा उसने उसको एक माध्यम के द्वारा सबके सामने रखा, इन्हीं माध्यमों में से एक माध्यम का नाम 'लोककथा' है। लोककथाओं में

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

कल्पना का तत्व अधिक पाया जाता है जिसमें वास्तविकता की कमी होती है। लोककथाओं की कोई भी विषय वस्तु नहीं होती, इसमें समाज, संस्कृति, धर्म और उन तमाम क्रियाविधियों का समावेश हो सकता है जिसे मानव समाज ने अनुभव किया है एवं जिसकी आवश्यकता महसूस हुई होगी। लोक साहित्य जनमानस की भाषा, संस्कृति और जीवन शैली को व्यक्त करता है। यह जीवन के अनुभवों और लोक समाज के संबंधों से जुड़े हुए विषयों को अपनाता है। लोककथा एक छोटी कहानी होती है जो कि जीवन के अनुभवों और लोक समाज के संबंधों से जुड़ी होती है। लोककथाओं से संबंधित साहित्यिक समीक्षा यहाँ दिया जा रहा है।

लोककथाओं से संबंधित साहित्यों का पुनरावलोकन

रॉबर्ट रेडफील्ड ने अपनी पुस्तक *'फोककल्चर ऑफ यूकाटम'* (1941) में लोक समाज को परिभाषित करने का प्रयास किया है। उनके अनुसार, 'ऐसे समाज लघु, पृथक, गैर-शिक्षित तथा समांग होते हैं। शरत चन्द्र राय ने *'छठी पूर्व देशीय ओरियंटल कांग्रेस'* (1930) में लोक साहित्य को 'आदिम समाज का बौद्धिक उद्विकास' कहा है। इसके अतिरिक्त उन्होंने लोक साहित्य को 'मानव मस्तिष्क का प्रागैतिहास' बतलाया है। फ्रांज बोआस ने अपनी पुस्तक *'माइथोलोजी एण्ड फोकलोर'* (1938) में लोककथा को परिभाषित करते हुए कहा है कि, 'लोककथाएँ दैनिक जीवन के अनुभवों के आधार पर कल्पना के उड़ानों का परिणाम है। 'लोक' शब्द को अंग्रेजी में 'फोक' (Folk) कहा जाता है जिसका साधारण अर्थ 'मानव समाज' होता है। लोक शब्द के लिए 'ग्राम' या 'जन' शब्द का भी प्रयोग होता है। 'लोक' की भारतीय एवं पाश्चात्य अवधारणा में अंतर है। भारतीय अवधारणा में 'लोक' वह जनसमुदाय होता है जो सरल हो एवं जिनमें सहजता दिखाई दे जबकि पाश्चात्य अवधारणा के अनुसार 'फोक' शब्द का प्रयोग आदिम, पिछड़ा एवं असभ्य जनसमुदाय के लिए किया जाता है।

'लोक' शब्द से ही हिंदी के 'लोग' शब्द की व्युत्पत्ति मानी जाती है। वर्तमान में 'लोक' शब्द के स्थान पर 'जन' एवं 'ग्राम' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। अमूमन 'लोक' शब्द का प्रयोग समस्त मानव समाज के लिए होता है। प्रत्येक समाज की अपनी-अपनी लोककथाएँ होती है जो अपने पूर्वजों द्वारा कही गई लोककथाओं को मौखिक रूप से सहेज कर रखती है। इन लोककथाओं का मुख्य उद्देश्य समाज के ज्ञान, समझ, नैतिक मूल्य तथा पूर्वज संबंधी ज्ञानों को एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी तक बढ़ाना होता है। लोककथाओं में किसी समाज की न सिर्फ उत्पत्ति संबंधी बातें निहित होती है बल्कि उनके शौर्य, संघर्ष एवं कई गौरवशाली इतिहासों का भी समावेशित वर्णन होता है। इसके अतिरिक्त हमें मिथक, मुहावरे, बुझौनियाँ आदि इसके उपभाग भी हैं जो लोककथाओं के साथ निरंतर प्रयोग में लायी जाती है। लोककथाओं की व्यापकता हमें धार्मिक क्षेत्रों में सर्वाधिक देखने को मिलती है जो पौराणिक लोककथाओं एवं उनसे जुड़ी मिथकों के रूप में व्याप्त है।

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

वैश्विक स्तर पर जर्मनी के भाषा विज्ञानी जैकब ग्रिम्म (1785-1863) ने जर्मन भाषा के संकलन हेतु सर्वप्रथम उन्होंने वहाँ की लोककथाओं एवं मिथकों के संकलन का कार्य किया था। इसके बाद उनके भाई विल्हेल्म ग्रिम्म (1786-1859) ने जर्मन मिथकों का संकलन अपनी पुस्तक *'दियूसचे मायथोलोजी'* में किया। भारत के संदर्भ में सर्वप्रथम भारतीय लोककथाओं का संकलन मेरी फ्रेरे (1868) द्वारा *'दि ओल्ड डेक्कन डे'* नामक शीर्षक के अंतर्गत किया गया था। इसके पश्चात भारत में भी लोककथा, मिथक, किस्से कहानियों से संबंधित अध्ययन प्रारंभ हुए। 19वीं सदी में यूरोपीय मिशनरियों ने भारत की आम लोगों पर अपना ध्यान केंद्रित किया। बहुत सारी महत्त्वपूर्ण पत्रिकाएँ जैसे *'रॉयल एसियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल'* (1874), *'इंडियन एंटीकुएरी'* (1875), *'जर्नल ऑफ दि एंथ्रोपोलोजिकल सोसाइटी ऑफ बॉम्बे'* (1886) जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में इन शोधों को प्रकाशित किया गया। मिशनरियों ने जनजातियों के मध्य लोककथा संबंधी शोधों की शुरुआत भारत के पूर्वोतर राज्यों से की थी। इसमें उन्होंने असम, अरुणाचल-प्रदेश (तात्कालिक नेफ़ा), नागालैंड, मणिपुर एवं त्रिपुरा जैसे राज्यों की लोक कथाओं, लोक गीतों, मिथकों व पहेलियों पर शोध किया तथा इसी विषय पर बिहार, उड़ीसा एवं मध्य-प्रदेश की जनजातियों पर भी शोध कार्य किया था।

एस. सी. मित्रा जो कि एक प्रसिद्ध लोक साहित्यकार रहें हैं, उन्होंने इस विषय को लेकर अलग-अलग जनजातियों के मध्य व्यापक कार्य किया है। उन्होंने असम की लुशाई कूकी जनजाति, नागालैंड की लहोटा नागा एवं अंगामी नागा, झारखंड की बिरहोर, मुंडा एवं हो आदि जनजातियों की लोक लोक कथाओं का गहन अध्ययन किया है। एस. सी रॉय (1942) ने अपनी पहली मोनोग्राफ *'मुंडा एण्ड देयर कंट्री'* में मुंडा जनजाति के बहुत से लोक कथाओं का संकलन किया है। डब्ल्यू. जी. ग्रिफिथ (1944) ने अपनी पुस्तक *'फोकलोर ऑफ दि कोल्स'* में कोल जनजाति के 19 विभिन्न कहानियों का संग्रह किया है। स्टीफेन फ्यूक्स (1960) ने *'दि गोंड एण्ड भुईयां ऑफ ईस्टर्न मंडला'* नामक अपनी मोनोग्राफ में गोंड तथा भुईयां जनजाति से प्राप्त कई कहानियों का उल्लेख किया है। जब भी बात जनजातीय लोक कथाओं की होती है, तब वेरियर एल्विन का नाम अवश्य आता है। लोक कथाओं को लेकर उनके उड़ीसा में किए गए शोधों का भी उल्लेख किया जाता है। उन्होंने *'ट्राइबल मिथ्स ऑफ उड़ीसा'* (1954) नामक पुस्तक लिखी जिसे उन्होंने स्वयं जनजातियों की पुराण कहा था। यह पुस्तक संपूर्ण भारत में बहुत सफल हुई तथा लोककथा के क्षेत्र में आज भी सबसे अधिक प्रचलित है। इस पुस्तक से पहले उन्होंने मध्य भारत की जनजातियों पर काफी गहन शोध किए जिसके आधार पर *'फोकटेल्स ऑफ दि बस्तर क्लान गॉड'* (1943) तथा *'दि मुरिया एण्ड देयर घोटुल'* (1947) जैसी महत्त्वपूर्ण कृतियों को लिखा। जिसमें उन्होंने मध्य-प्रदेश के बस्तर की मारिया एवं मुरिया जनजाति के गोत्र देवता से संबंधित लोककथाओं पर शोध किया। इसके अलावा मारिया जनजाति की युवागृह घोटुल तथा वहाँ व्याप्त सभी किस्से-कहानियों का वर्णन उन्होंने अपने नृजातीय वर्णन में किया है।

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

उनकी पहली पुस्तक *'फोकटेल्स ऑफ महाकौशल'* (1944) में उन्होंने मंडला, सिवनी, बालाघाट, बिलासपुर, रायपुर, रीवा, कवर्धा एवं बस्तर के क्षेत्रों की थोड़ी बहुत किस्से कहानियों का संकलन किया था। ये संकलन उन्होंने प्राथमिक रूप से ही किया था जो पूरी तरह से वास्तविक स्रोत थी। वेरियर एल्विन (1958) ने उत्तर-पूर्व भारत में भी अपना शोध कार्य किया था। उन्होंने अपनी पुस्तक *'मिथ्स ऑफ दि नॉर्थ-ईस्ट फ्रंटियर ऑफ इंडिया'* में वहाँ की संस्कृति एवं मिथकों तथा उससे जुड़ी लोककथाओं का संकलन किया। उनके अनुसार मिथकों के बहुत से प्रकार है जिसे अलग-अलग समय में प्रयोग किया जाता है। एल. पी. विद्यार्थी (1978) द्वारा प्रकाशित पुस्तक *'राइज़ ऑफ एंथ्रोपोलोजी इन इंडिया'* में उन्होंने लोक साहित्य एवं लोक संगीत के संकलन करने, उनका प्रलेखन करने तथा इस क्षेत्र में अधिक से अधिक शोध पर बल दिया। साथ ही साथ उन्होंने इस पुस्तक में संपूर्ण भारत में हुए तात्कालिक जनजातीय लोक साहित्य से संबंधित शोधों का विस्तृत वर्णन भी किया है।

लोक साहित्य का स्वरूप एवं विशेषताएँ

लोक साहित्य से अभिप्राय एक एकीकृत सामाजिक समूह में रहने वाले लोगों के पारंपरिक साहित्य से है। लोक साहित्य एक प्रकार की विद्या है जो प्रत्येक समाज में व्याप्त होती है। इसके अंतर्गत लोक कथाएँ, लोक गीत, लोक संगीत जैसे कई अन्य विद्याएँ हैं। लोककथाएँ किसी समाज की वे लोककथाएँ हैं जो मौखिक रूप से उस समाज में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होती है। ये लोककथाएँ मुख्य रूप से अपने समाज से जुड़ी होती हैं जिसमे मुख्यतःउस समाज में मौजूद किसी भी जाति, संप्रदाय एवं व्यक्ति से जुड़ी किवदंतियाँ होती है। लोककथाओं के विविध आयाम प्राचीन काल से वाचिक परंपरा के साथ एक युग से दूसरे युग, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक अनवरत चलते हुए, स्वयं को परिष्कृत करते हुए युगानुरूप परिवर्तित होते रहे हैं। जब लेखन शैली का आविष्कार नहीं हुआ था तब यही एक मात्र साहित्य की शैली थी जो समाज में व्याप्त थी। एक समाज की संस्कृति पर लोककथाओं का प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पड़ता है तथा संस्कृति को आगे बढ़ाने एवं उसके विकास में लोककथाओं का प्रबल योगदान है। लोककथाओं का प्रसार बड़ी ही आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक हो जाता है। ये लोककथाएँ एक स्थानीय परिवेश के अनुरूप ही होता है इस नाते लोग बड़ी आसानी से इसे समझते हैं एवं लोग इसके अनुसार अनुसरण भी करते हैं। लोककथाओं को पेश करने की शैली बेहद सरल व स्वाभाविक होती है। इसके सरल व स्वाभाविक होने का यह कतई अर्थ नहीं कि इसमें साहित्यिक सौंदर्य की कमी होती है। बहुत सी लोककथाएँ ऐसी होती हैं जिनमें साहित्यिक सौंदर्य दृष्टिगोचर होती है। इसके अतिरिक्त कई ऐसी लोककथाएँ भी हैं जिनमें साहित्यिक सौंदर्य का अभाव होता है।

लोक साहित्य संपूर्ण मानव जन के खुशी एवं गम, सुख-दुख, हर्ष-विषाद की सहज प्राकृतिक सरस अभिव्यक्ति है। लोक साहित्य का स्वरूप प्रादेशिक स्तर से होते हुए राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक होती है। यह

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

संपूर्ण मानव जाति के विरासत का साम्य रूप है। समस्त मानव जन समूह के मध्य लोककथाएँ अवश्य मौजूद होगी। समाज चाहे जैसा भी हो लेकिन उनमें किसी न किसी स्वरूप में लोक साहित्य पाया ही जाता है। यह उस समाज के इतिहास को समेटे हुए एक विरासत है जो पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती रहती है। लोक साहित्य में किसी व्यक्ति विशेष की नहीं, बल्कि समस्त लोक के कल्याण की भावना निहित होती है। लोक साहित्य को देखने से ऐसा लगता है कि लोक साहित्य से जुड़ी रचनाएँ बहुत पहले से समाज में कही-सुनी जाती हैं। लेकिन इन कृतियों की रचना किसने की इसके बारे में जानना लगभग असंभव है। बिना रचनाकार के कोई भी कृति की रचना संभव नहीं होती। इस दृष्टि से लोक साहित्य किसी न किसी रचनाकर द्वारा रचित होती है। लेकिन बहुत सारे कारणों की वजह से हम ये नहीं जान पाते है कि इन साहित्यों के रचनाकर कौन हैं। अधिकतर लोक साहित्य की रचना अलिखित स्वरूप में होती है जो मौखिक रूप में आगे बढ़ती है। लिपिबद्ध साहित्यों के साथ उसके रचनाकर का नाम जुड़ा होता है। वैसे तो लोक साहित्य किसी न किसी विशेष व्यक्ति कि रचना होती है किंतु यह रचना व्यक्तिगत न होकर सामाजिक रचना बन कर समाज में व्याप्त हो जाती है। लोक साहित्यों के अंतर्गत उसके रचयिता के अज्ञात होने का एक कारण यह भी है कि इसका निर्माण धन, कीर्ति एवं यश आदि की प्राप्ति के लिए नहीं होती है। इसके सृजन का यही मकसद होता तो इसमें रचयिता का नाम अवश्य शामिल किया जाता। परंतु, लोक साहित्यों के मामलों में ऐसा नहीं है इसलिए इनके निर्माण के काल का पता नहीं चल पाता है।

लोक साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि यह लिपिबद्ध न होकर मौखिक रूप में प्राप्त होती है। मौखिक स्वरूप होने की वजह से लोक साहित्य में परिवर्तन की संभावनाएं अधिक रहती है। लिखित साहित्य जिसे शिष्ट साहित्य भी कहा जाता है उसमें जितना लिख दिया जाता है आगे चलकर उसमें उतना ही रहता है। जबकि, लोक साहित्यों का स्वरूप मौखिक होने की वजह से समय-समय पर इसके कथानक में बदलाव होते रहते हैं। लोक साहित्य की अन्य कई विशेषताएँ हैं जैसे, यह लघु परंपरा से जुड़े साहित्य होते हैं। जो मौखिक परंपरा से पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती है तथा इसके रचनाकार अज्ञात होते हैं। इसकी रचना लोगों के अंदर सांस्कृतिक ज्ञान एवं मनोरंजन के लिए की गयी होती है। जिसमें उस समाज की सदियों से चली आ रही एक इतिहास होती है। लोक साहित्य किसी भी समाज के जन मानस का प्रतिबिंब है। समान्यतः ग्राम साहित्य एवं जन साहित्य को लोक साहित्य के पर्याय के रूप में देखा जाता है। इसके अलावा लोक साहित्य कला एवं संस्कृति में संपर्क बनाए रखने का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इसकी प्रवृति अकृत्रिम, सरल तथा सरस है इस वजह से लोक साहित्य को जन समूह से स्वीकृति मिली होती है तथा यह परिवर्तनशील भी होती है। इसमें आंचलिकता तथा सामुदायिकता की नींव होती है। इसकी एक अन्य विशेषता यह भी है कि इसमें पाठक नहीं होते केवल वक्ता एवं श्रोता ही होते हैं।

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

लोक साहित्य का क्षेत्र

लोक साहित्य का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत और व्यापक है। किसी भी जन समूह का हँसना, रोना, गाना, खेल कूद करना आदि सभी इसके अंतर्गत आ जाता है। लोक साहित्य आम जनता का वह साहित्य है जो जनता के द्वारा जनता के जन-कल्याण के भाव से लिखा जाता है। लोक साहित्य के कई क्षेत्र होते हैं जो इसके विभिन्न विधाओं से परिचय कराते हैं। जैसे- लोक कथा, लोक नाट्य, लोक गाथा, लोक गीत आदि है। परंतु यहां सिर्फ लोक कथा के बारे में ही विस्तृत चर्चा की गई है।

लोककथा

प्रत्येक समाज के मनुष्यों में कथा प्रवृत्ति होती है जो निरंतर आगे बढ़ते हुए कई सारे परिवर्तनों एवं परिवर्धनों के साथ वर्तमान रूप तक पहुँचती है। लोककथाओं में उनके साथ कुछ विशेष रूढ़ियाँ होती हैं, जो उनके साथ चली आती है। जिसमें समय-समय पर थोड़ी बहुत संशोधन होते हैं, किंतु वे अधिकतर अपने मूल स्वरूप में ही रहती है। इन्हीं छोटे-मोटे परिवर्तनों के कारण एक ही लोककथा कई बार विभिन्न संदर्भों एवं ग्रामों में बदलकर अनेक रूप अपना लेती है। जिस तरह लोकगीत हमें एक परंपरागत वसीयत के रूप में प्राप्त है, उसी तरह लोककथाएँ भी हमें अपने पूर्वजों से मिलती है। लोककथा का निर्माण किस सदी या काल में हुआ इसका निर्धारण करना एक दम असंभव है। बुजुर्गों के द्वारा प्रायः लोककथा को सुनाते हुए देखा जा सकता है, जो वे स्वयं अपने बचपन में अपने घर के बड़े-बुजुर्गों से सुनते आए थे और अब वे इस क्रिया को आगे बढ़ा रहे हैं, यही प्रक्रिया निरंतर आगे बढ़ती रहती है। लोककथाओं का अस्तित्व कितना पुराना है इसे कोई बता नहीं सका है। इस बात की पुष्टि भी कोई नहीं कर सका है कि सबसे पहले लोककथाओं की पहल कहाँ से हुई, किसने की या कब हुई। लोककथाओं का प्रत्येक लोक समाज में अपना एक विशेष स्थान होता है और यह एक व्यक्ति से सुनते हुए दूसरे व्यक्ति तक जाती है। यह न सिर्फ व्यक्ति से व्यक्ति आगे बढ़ती है बल्कि कई लोककथाएँ ऐसी हैं जो एक समाज से दूसरे समाज से लेकर कई अन्य समाजों तक का भी सफर तय करती है। एक स्थान से दूसरे स्थान पर इन कथाओं के पहुँचने से इनका रूपरंग भी बदल जाता है। एक ही लोककथाएँ को कई बार अलग-अलग जगहों में भिन्न-भिन्न तरीकों से पेश की जाती है। इस तरह समय के साथ-साथ लोककथाओं में नवीनता बनी रहती है और ये कभी पुरानी नहीं होती है।

लोककथाओं में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनमें सुर-असुर, देव-परियाँ, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, प्रकृति का मानवीकरण, चमत्कार आदि जैसे विषय होते हैं। लोककथाएँ हमें यह भी बोध करवाती हैं कि मूल रूप से समस्त विश्व में मनुष्य का स्वभाव एक जैसा ही है। लोककथाओं के अध्ययन से इनकी कुछ अपनी विशेषताओं का पता चलता है, जैसे मनुष्य प्राचीन काल से ही सुखों की खोज में लगा हुआ है। सुख लौकिक एवं पारलौकिक दोनों प्रकार के होते हैं।

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

पारलौकिक सुख को लौकिक सुख से अधिक ऊंचा स्थान दिया जाता है। 'अंत भला तो सब भला' के अनुसार हमारी लोककथाओं का अंत सुखद होता है। ऐसी लोककथाओं का मिलना लगभग असंभव है जिसका अंत सुखद न हो। प्राचीन काल से लोककथाओं की यही मुख्य प्रवृत्ति रही है। इसलिए लोककथाओं के किरदार अनेक साहसिक एवं रोमांचकारी घटनाओं से होकर अंत में सुख की प्राप्ति करते हैं। अधिकतर लोककथाएँ मंगलकामना की भावनाओं से जुड़ी होती हैं। इसके अतिरिक्त लोककथाओं में हमें धर्म से जुड़ी बातें नजर आती हैं। इन लोककथाओं का अंत हमेशा धार्मिक राह की ओर ले जाते हुए समाप्त होता है। अधिकांशतः लोककथाओं का लक्ष्य कई प्रकार के दैवीय एवं प्राकृतिक प्रकोपों का डर दिखाकर श्रोताओं को धर्म तथा कर्तव्य पालन के पथ पर ले जाना होता है। ताकि, समाज का जो स्वरूप बनाया गया है उसमें किसी भी प्रकार से कोई परिवर्तन न हो एवं उसकी रूप यूं ही बरकरार रहे।

लोककथाओं की उत्पत्ति

लोककथा की उत्पत्ति तब से हुई होगी जब भाषा का आविष्कार हुआ होगा। 'पूर्व-पाषाण काल' से ही मानव ने जो भी आविष्कार किए उसे उसने अपनी भावी पीढ़ी को सुनाया और ऐसे ही सुनाते-सुनाते इसने एक रूप धारण कर लिया जिसे आज हम लोककथा के नाम से जानते हैं। इसमें प्रसार की भी अहम भूमिका रही होगी। जिस प्रकार भाषा का प्रसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर हुआ है उसी तरह 'लोककथाओं' का प्रसार भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर हुआ होगा। जिसमें न सिर्फ उस स्थान की संस्कृति शामिल हुई होगी बल्कि बाहर से आए हुए लोककथाओं ने अपने अंदर मौजूद संस्कृति का भी प्रसार किया होगा। ऐसे में लोककथाओं ने समाज में अपना विशेष प्रभाव डाला होगा जिससे लोककथाएँ समाज में अपना स्थान बनाने में सफल रही होगी। लोककथाओं के अध्ययन से पता चलता है कि मानव जीवन में घटित होने वाली घटनाएँ ही लोककथाओं के सृजन का आधार बनी होगी। उदाहरण के लिए, प्रकृति में ऋतुओं का बदलना, सूर्य-चाँद का उदय एवं अस्त होना, बारिश, बाढ़, बिजली का चमकना, बादल का गरजना जैसे सारे प्राकृतिक घटनाएँ भी मानव के कल्पना की आधार बनी होगी। जिसके कारणों का उसने एक उत्तर भी बनाया होगा। इसी जिज्ञासा ने लोककथाओं की उत्पत्ति की एवं जिसके अंदर यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई उसने ही इन लोककथाओं का सृजन किया एवं उसने ही मौखिक रूप से भावी पीढ़ी को भी इस ज्ञान से अवगत कराया है। इसके अलावा मनुष्य के जीवन में कई सारी इच्छाएँ व लालसा दबी होती है जिसे वो पूरा करना चाहता है लेकिन किन्हीं कारणों की वजह से ऐसा कर नहीं पाता है। तब जाकर वह कई बार उन्हीं इच्छाओं को पूरा करने के लिए 'लोककथाओं' का सृजन करता है ताकि उसके पात्र द्वारा उसकी चाहत की पूर्ति हो सके। लोककथाएँ किसी भी समाज का एक अभिन्न अंग बन कर रहती है एवं समाज में घुल-मिल जाती है। मौखिक प्रवृति होने की वजह से लोग बड़ी जल्दी कथाओं को याद कर लेते थे। जो व्यक्ति लोककथाओं को सुनाता है उसके कथा को कहने की शैली भी काफी हद तक कथाओं को याद रखने में अपना प्रभाव डालती है।

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

लोककथाओं का वर्गीकरण

लोककथाएँ सभी समाज में एक जैसी नहीं होती है। समाज के अनुसार इनकी संख्या व प्रकारों का निर्माण किया जाता है। इसके कई अलग-अलग रूप होते हैं जिसके गुण भी भिन्न-भिन्न होते हैं। इन्हीं गुणों के आधार पर समाज में लोककथा का स्थान विशेष होता है। सभी लोककथाएँ अपनी विशिष्टताओं के वजह से समाज में अपना अस्तित्व बनाए हुए होती है। लोककथाओं को मुख्य रूप से निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है-

उपदेशात्मक लोककथाएँ

लोककथाएं मानव समाज की भलाई तथा नैतिकता पर बल देती है। ऐसी लोककथाएँ प्रायः अप्रत्यक्ष रूप से समाज में शिक्षा देने का कार्य करती है। इनके माध्यम से लड़ाई-झगड़े एवं अन्य सामाजिक बुराइयों से दूर रहने की प्रेरणाएँ मिलती है। ऐसी बहुत सी लोककथाएँ हैं जिनमें महिलाओं के रहन-सहन एवं विवाह के पश्चात जीवन यापन करने संबंधी पक्षों पर जोर दिया गया है। कई लोककथाएँ ऐसी भी होती हैं जिनमें स्त्रियों के कारण परिवार को विभिन्न प्रकार के दुख-तकलीफ़ों को झेलना पड़ता है। इनमें सौतेली माताओं तथा सौतन से जुड़ी लोककथाएँ भी बहुत प्रचलित होती हैं। कई लोककथाएँ ऐसी भी जिनमें स्त्री को डायन कहकर संबोधित किया गया है। उन्हें बुरी स्त्री की श्रेणी में रखा गया है। ऐसी स्त्रियाँ मायावी होती हैं और वे काला जादू जानती हैं। इनमें किसी को भी सम्मोहित करने की शक्ति होती है। ये स्त्रियाँ प्रायः दूसरों के घरों को बर्बाद करने में सक्षम होती हैं। ये स्त्रियाँ गैर पुरुषों पर डोरे डालती हैं और जादू-टोना करके उन्हें अपने वश में कर लेती हैं। ऐसी लोककथाएँ समाज में पितृसत्ता को प्रदर्शित करती हैं। ऐसी लोककथाओं में कथा के नायक को तथा उससे संबंध रखने वालों को इन सब कृत्यों की वजह से विभिन्न प्रकार के संघर्षों का शिकार होना पड़ता है। शिष्टाचार से जुड़ी भी कई सारी लोककथाएँ मौजूद होती हैं जिनका मकसद लोककथाओं के माध्यम से यह उपदेश देना होता है कि बच्चे हमेशा बड़ों का आदर करें एवं उनका सम्मान करें। पुत्र द्वारा पिता का कहना न मानने पर कई प्रकार के कष्ट उठाने से जुड़ी अनेक लोककथाएँ हैं किन्तु ये सभी लोककथाएँ अंत में सुख एवं सकारात्मक स्तर पर जाकर समाप्त होती हैं। जब तक कथा पूरी नहीं होती तब तक कथा के पात्रों को हमेशा किसी न किसी घटनाओं में फँसा हुआ प्रस्तुत किया जाता है। श्रोता गण तो लोककथा सुनने के साथ वहीं पर कथाकार तथा अन्य श्रोताओं की परवाह किए बिना कथा के अंदर नायक को कष्ट देनेवालों को अपशब्द भी कहने लगते हैं। उन्हें ये सारी घटनाएँ सही मालूम पड़ती हैं। इसमें उनका विश्वास बेहद प्रबल होता है।

सामाजिक लोककथाएँ

इन लोककथाओं में विभिन्न प्रकार की सामाजिक व व्यक्तिगत बुराइयों से उत्पन्न घटनाओं का समावेश होता है। विशेष कर गृह कलह, लड़ाई-झगड़े, जात-बिरादर तथा अयोग्य राजा के कारण प्रजा का दुखी होना आदि प्रस्तुत

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

किया जाता है। बाल विवाह, प्रेम विवाह, बहू विवाह, गैर-जातीय विवाह तथा दहेज आदि की निंदा भी इन लोककथाओं में मिलती है। इन कथाओं में योग्य तथा निर्दोष व्यक्ति बुरे व्यक्ति के चंगुल में फँसकर परेशान होते दिखाई पड़ते हैं। सामाजिक कहानियों में वे लोककथाएँ अपना विशेष स्थान रखती है जिनमें नायिका मुख्य रूप से और नायक गौण रूप से कठिन परीक्षाएँ देते हैं। ऐसी परीक्षाओं में हमेशा सामाजिक एवं व्यक्तिगत चरित्र को प्रधानता दी जाती है। जिन नायक एवं नायिकाओं के चरित्र ठीक होते हैं वे ऐसी कठोर परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो जाते हैं। जैसे सच्चरित्र नारी जब तप्त तेल के कड़ाहे में अपना हाथ डालकर अपने सतीत्व की परीक्षा देती है तो कड़ाहे का तप्त तेल भी उस समय शीतल हो जाता है। पतिव्रता स्त्री सूर्य के रथ को भी रोक देती है। उसके भय से बड़े-बड़े दैत्य दानव चुड़ैलें भी पास नहीं फटकते। इसी तरह चरित्रवान नायक भी विकट परिस्थितियों में उत्तीर्ण होकर अपने लक्ष्य की प्राप्ति करते हैं।

धार्मिक लोककथाएँ

इनमें पूजा-पाठ, व्रत-उपवास एवं उनसे संबंधित कथाओं को रखा जाता है। सुखों की कामना के लिए कही गई इन लोककथाओं से उपदेश ग्रहण कर विभिन्न पर्वों के अवसर पर स्त्रियाँ व्रतों का पालन किया करती हैं। इन लोककथाओं के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया जाता है कि पति, पुत्र एवं भाइयों की कुशलता के लिए तपस्या करना स्त्री जीवन का मुख्य धर्म है। ऐसी लोककथाओं में प्रायः उस समाज में होने वाली पूजा-पाठ से संबंधित क्रिया विधियों का वर्णन रहता है। साथ ही ऐसी लोककथाओं में अगर ठीक से व्रत या धार्मिक कार्य न किए गए तो उसके अंजाम कितने बुरे होंगे, इसके भी कई उदाहरण पेश किए जाते हैं। लोक लोककथाओं के माध्यम से धार्मिक कृत्यों में किसी प्रकार की अड़चन न आए इसलिए उसे ऐसे तरीकों से पेश किया जाता है ताकि उससे एक डर का माहौल बना रहे और लोग इसी डर को श्रद्धा समझें तथा धार्मिक क्रियाकलाओं में बाधा न पहुँचें।

प्रेम प्रधान लोककथाएँ

समाज में प्रेम संबंधी लोककथाएँ भी सुनने को मिलती हैं। इनमें मुख्य रूप से माता का पुत्र के प्रति, पुत्र का माता के प्रति, पत्नी का पति से और पति का पत्नी के प्रति तथा भाई-बहन के प्रेम से जुड़ी लोककथाएँ मिलती हैं। प्रायः सभी लोककथाओं में वर्णित प्रेम कहानियाँ कर्तव्य एवं निष्ठा पर आधारित होती है। कुछ लोककथाएँ तो ऐसी हैं जिनमें प्रेम को बहुत ही अच्छे तरीके से पेश किया गया है। वहीं, कुछ लोककथाओं में अविवाहित प्रेम-संबंध को एक दम निषेध की तरह प्रस्तुत किया जाता है। बहिर्जातीय विवाह से जुड़ी संघर्षों को ऐसी लोककथाओं में बहुत ही

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

कठोरता से प्रस्तुत किया जाता है। इन लोककथाओं के माध्यम से प्रेम से संबंधित दो पक्ष देखने को मिलते हैं। पहला, इसमें प्रेम को एक सकारात्मक रूप से प्रस्तुत किया जाता है जिसमें लोककथा के नायक नायिका लाख संघर्षों के बावजूद भी अंत में उनका मिलन हो जाता है और प्यार की जीत होते दिखाई जाती है। वहीं, दूसरे पक्ष एक दम इसके उलट है जहाँ प्रेम या प्रेम-विवाह करने वालों को काफी दंड दिये जाते हैं। ऐसी लोककथाओं का सृजन प्रायः सभी समाज अपनी परंपराओं व समाज को चलाने से जुड़ी मान्यताओं के अनुसार किया जाता है।

मनोरंजन संबंधी लोककथाएँ

ऐसी लोककथाओं का मूल उद्देश्य श्रोताओं के मनोरंजन की पूर्ति करनी होती है। बालक एवं बालिकाएँ ऐसी कहानियों को तुरंत ही याद कर लेते हैं और वे भी अपने स्तर से अपने हम उम्र के बच्चों के बीच उन्हीं लोककथाओं को कहते हैं। ऐसी लोककथाएँ प्रायः छोटी हुआ करती हैं जिनमें हास्य रस भी भरपूर रहता है। भिन्न-भिन्न जानवरों जैसे शेर, हाथी, कुत्ता, बिल्ली, साँप, नेवला, भालू, सियार, कौआ, तोता तथा अन्य जानवरों एवं पक्षियों से संबंधित ये कहानियाँ होती है जो बच्चों का मनोरंजन करती हैं। इनमें वर्णित विषय गंभीर भी होते हैं किंतु प्राथमिकता हल्की-फुल्की बातों पर ही होती है। इन लोककथाओं का अंतजीव रक्षा से जुड़ी बातों पर जाकर खत्म होता है। ऐसी कहानियाँ अपने मनोरंजन वाले गुणों के कारण बच्चों में काफी प्रचलित होती हैं। बच्चे इन लोककथाओं को सुनने के लिए बार-बार जिद भी करने लगते हैं। जैसे- चंद्रमा से जुड़ी कई कहानियाँ मौजूद हैं जो माताएँ अपने बच्चों को बचपन से ही भोजन कराते समय या सुलाते समय सुनाया करती हैं। कई लोककथाओं में तो चाँद को 'चंदा-मामा' भी कहकर संबोधित किया जाता है।

जातीय पात्रों पर आधारित लोककथाएँ

प्रत्येक समाज में उसकी जाति से जुड़ी कुछ न कुछ कहानियाँ जरूर मिलती हैं। इनमें से प्रायः सभी कथाओं में उस जाति की शौर्यगाथा का उल्लेख मिलता है। भले ही उस जाति का स्तर आज समाज में निचले पायदान पर हो लेकिन उनकी लोककथाओं में वे एक समय अच्छी स्थिति में थे और उनका सामाजिक स्तर भी ऊँचा रहा था। इसके अलावा दूसरी अन्य जातियों की अच्छाइयों एवं बुराइयों से जुड़ी कहानियाँ भी काफी मात्रा में प्रचलित होते हैं। प्रत्येक समाज के अंदर निवासरत जाति समूहों की लोककथाओं में एक बात अवश्य ही देखने को मिलेगी की उसकी जाति भी पूर्व में किसी न किसी राजवंश से जुड़ी रही है। चाहे वो कबीलाई स्तर पे हो या वृहद रजवाड़ों के रूप में, सभी समाज की लोककथाओं में शासन से जुड़े उनके भी ऐतिहासिक दृष्टिकोणों का वर्णन मिलता है। इसके अतिरिक्त समाज में ऊंच-नीच, जात-पात की भावना को जागृत करने का श्रेय भी लोककथाओं को ही जाता है। इन्हीं लोककथाओं के माध्यम से ऊंची जात व नीची जात से जुड़ी बाते व उनसे जुड़ी भावनाएं पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती है। एक अबोध

Year-5 Volume: IV, October-December, 2023 Issue-20ISSN: 2582-1296 (Online)
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Website: www.theasianthinker.com Email: asianthinkerjournal@gmail.com

बच्चे के अंदर जातिगत भावना इन्हीं जातीय लोककथाओं के माध्यम से भरी जाती है। एक समाज में जातिगत लोककथाओं की बड़ी महत्ता होती है। लोग आँख मूँद कर इनका पालन करते हैं। समाज को बांधने में व दिशा-निर्देश देने में इनका बड़ा योगदान होता है।

निष्कर्ष

लोककथाएँ किसी न किसी प्रकार से अपने समाज के अतीत को दर्शाने का प्रयास करती है। सभी धर्म, जाति, संप्रदाय की अपनी विशेष लोककथाएँ होती हैं। समाज में रहने वाले प्रत्येक समुदायों के पास उनके समाज से जुड़ी लोककथाएँ अवश्य मिल जाएंगी। जनजातियों का भी अपना एक विशिष्ट समाज होता है। जहाँ उनकी जीवनशैली गैर-जनजातीय समाजों से भिन्न होती है। उनकी परंपरा, रीति-रिवाज़, धार्मिक मान्यताएँ, रहन-सहन, वस्त्र-आभूषण, भौतिक संस्कृति तथा भाषा भी दूसरे समाजों से अलग होती हैं। ये समाज प्रारंभ से ही अपने आप को प्रकृति के निकट रखता चला आया है। प्रकृति न सिर्फ जनजातियों की जननी है बल्कि इसी से उनकी प्रत्येक गतिविधियां जुड़ी हुई होती हैं। प्रकृति की रक्षा के लिए ये लोग पूरी तरह से समर्पित होते हैं। जनजातीय समाज उत्सव धर्मी समाज है और ये लोग प्रत्येक खुशी एवं गम के मौकों पर अपनी भावनाओं को अपने गीत, संगीत व लोककथाओं के माध्यम से प्रकट करते हैं। जनजातीय लोककथाएँ उस समाज के अंदर बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। अन्य समाजों के साथ-साथ जनजातीय समाजों में भी लोककथाएँ व्यापक मात्रा में मिलते हैं। ये लोककथाएँ आज भी उन्हीं मूल स्वरूपों में विद्यमान होती है जैसा वे पहले हुआ करती थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. उपाध्याय, विजय शंकर एवं पाण्डेय, गया. (2001). *मानवशास्त्रीय विचारक एवं उनकी विचारधाराएँ*. दिल्ली विश्वविधालय: हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय.
2. एल्विन, वेरियर. (1943). *दि एबोरिजिनल्स*. बंबई : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
3. चौरे, नारायण. (1987). *कोरकू का सांस्कृतिक इतिहास*. नागपुर : विश्वभारती प्रकाशन.
4. चौरे, नारायण. (1989). *भारतीय जनजाति कोरकूओं के लोकगीत*. नागपुर : विश्वभारती प्रकाशन.
5. पाटिल, अशोक द. (1993). *कोरकू जनजीवन*. नागपुर : विश्वभारती प्रकाशन.
6. पारे, धर्मेन्द्र. (2005). *कोरकू जनजातीय गाथा ढोला कुँवर*. भोपाल: आदिवासी लोक कला अकादमी.
7. पारे, धर्मेन्द्र. (2013). *कोरकू जनजाति की कथाएँ*. भोपाल: आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी.
8. पाण्डेय, गया. (2006). *भारतीय मानवशास्त्र*. नई दिल्ली: कान्सैप्ट पब्लिशिंग कंपनी.

9. मुखर्जी, रवीद्र नाथ. (2010). *सामाजिक मानवशास्त्र की रूपरेखा*. दिल्ली: विवेक प्रकाशन.
10. हसनैन, नदीम. (2010). *भारतीय जनजातीय संस्कृति*. नई दिल्ली: कान्सैप्ट पब्लिशिंग कंपनी.
11. Pasayat, Chitrasen. (2003). *Glimpses of Tribal and Folk Culture*. New Delhi: Anmol Publication.
12. Russell, R.V. (1975). *The Tribes and Castes of the Central Provinces of India*. Delhi: Cosmo Publications.
13. Singh, K.S. (1998). *India's Communities*. Mumbai: Oxford University Press.
14. Sharma, Suresh K. (2010). *Folk culture of India*. Delhi: Vista International Publishing House.
15. Vidyarthi, L.P. (1978). Rise of Anthropology in India. *A Social Science Orientation*. Delhi: Concept Publishing Company.

The Asian Thinker